त्यक्त्वा स्वधर्मं चरणाम्बुजं हरेर्भजन्नऽपक्वोऽथ पतेत्ततो यदि।
यत्र क्व वाभद्रमभूदमुष्य किं को वार्थ आप्तोऽभजतां स्वधर्मतः।।

'विषय भोग को त्याग कर जो कृष्णभावनाभावित कर्म करता है, वह यदि कार्य-पूर्ति न कर पाने से पतित भी हो जाय, तो उसे क्या हानि? इसके विपरीत, प्राकृत क्रियाओं को पूर्ण करने से क्या लाभ होगा?' (श्रीमद्भागवत १.५.१७) इसी प्रकार लोकोक्ति है, 'अपने सनातन आत्मा को खोकर सम्पूर्ण विश्व को पाने से भी क्या लाभ होगा?'

प्राकृत कार्य तथा उनके फल देह के साथ ही समाप्त हो जाते हैं। परन्तु कृष्णभावनाभावित कर्म कर्ता को देहान्त के बाद फिर से कृष्णभावनाभावित बना देता है। कम से कम इतना तो निश्चित है कि पुनर्जन्म में उसे विद्वान् ब्राह्मण अथवा धनाढ्यों के कुल में मनुष्य देह की प्राप्ति होगी, जिससे भगवत्प्राप्ति का अवसर फिर सुलभ हो जायगा। यह कृष्णभावनाभावित कर्म की अनुपम विशेषता है।

13.2

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम्।।४१।।

व्यवसायात्मिका=सुदृढ़ (स्थिर); **बुद्धिः**=कृष्णभावना; **एका**=अनन्य; **इह**=इस संसार में; **कुरुनन्दन**=हे कुरुनन्दन; **बहुशाखाः**=बहुत प्रकार से विभक्त; **हि**=निश्चय ही; **अनन्ताः**=अपार; **च**=और; **बुद्धयः**=बुद्धि; **अव्यवसायिनाम्**=कृष्णभावना से विमुखों की।

अनुवाद

इस पथ के अनुगामी निश्चयात्मक बुद्धि से युक्त रहते हैं, उनका एक लक्ष्य होता है। परन्तु हे कुरुनन्दन! अस्थिर मति वालों की बुद्धि तो अनेक शाखाओं में विभक्त रहती है।।४१।।

तात्पर्य

कृष्णभावना के द्वारा जीवन अवश्य परम कृतार्थ हो जायगा—इस प्रकार की श्रद्धा को 'व्यवसायात्मिका' बुद्धि कहते हैं। श्री चैतन्य चरितामृत में उल्लेख है:

'श्रद्धा' शब्दे विश्वास कहे सुदृढ निश्चय।
कृष्णे भक्ति कैले सर्व कर्म कृत हय।।

श्रद्धा का तात्पर्य है दिव्य तत्त्व में सुदृढ़ विश्वास। इस श्रद्धा के साथ कृष्ण-भावनाभावित कर्म करने में तत्पर पुरुष के लिए परिवार, मानवता, राष्ट्रीयता विषयक सांसारिक कर्तव्यों का पालन करने की आवश्यकता नहीं रहती। पूर्व में किये गये शुभ-अशुभ कर्मों के फल ही मनुष्य को सकाम कर्म में लगाते हैं। कृष्णभावनाभावित हो जाने पर तो शुभ कर्मफल के लिए उद्यम करना भी व्यर्थ हो जाता है। कृष्णभावनाभावित पुरुष के सम्पूर्ण कर्म अनुकूल-प्रतिकूल के द्वैत से मुक्त, मायातीत हो जाते हैं। कृष्णभावनामृत की परमोच्च संसिद्धि देहात्मबुद्धि का त्याग करने से उपलब्ध होती है। शनैः शनैः कृष्णभावना का विकास करने से यह स्थिति अपने-आप